'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ६६ | वाराणसी, गुरुवार, ४ जून, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

अकाली दल की कार्यकारिणी-समिति के सदस्यों में

होशियारपुर (पंजाब) १२-५-'५९

वह धर्म निकम्मा है, जो कोई क्रान्ति की हरारत महसूस नहीं करता

इन दिनों हर गाँव में अल्पमत-बहुमत के झगड़े चलते हैं। पाँच साल में चुनाव तो एक बार होते हैं, लेकिन वे हर गाँव में आग लगा जाते हैं। चुनाव के कारण जो द्वेष पैदा होता है, उससे गाँव तबाह हो जाते हैं। इसलिए हमें गाँव की एकता को कायम रखना चाहिए। हमें सतत सावधान रहना चाहिए, ताकि गाँव में बाहरवाले लोगों का दखल न हो। सिर्फ गुरुद्वारे में सरकारी दखल न हो, इतना ही बस नहीं है। हमें गाँव-गाँव के लिए ऐसी स्वावलंबी योजना बनानी चाहिए, जिससे गाँव में शान्ति की ताकत बढ़े और सरकार का दखल न हो।

काम करने की प्रेरणा

अगर आपके दिल में इस काम की कामयाबी के संबंध में सन्देह हो तो मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि सिखों ने धर्म-प्रचार करके क्या किया? सिखधर्म सारी दुनिया में नहीं फैला, इसलिए क्या हम यह सोचते हैं कि यह धर्म सारी दुनिया को मंजूर होगा, तभी चलेगा? नहीं, हम सिर्फ इतना ही सोचते हैं कि यह धर्म सही है, इसलिए जितना फैलता है, उतना ही ठीक है। उतने से ही हम प्रेरणा पाकर आगे प्रचार करने की योजना बनाते हैं। ठीक इस तरह ग्रामदान के बारे में भी सोचना होगा। अभी तक सारे देश के कुल गाँव ग्रामदान में प्राप्त नहीं हुए, फिर भी हमारे लिए आगे काम करने की प्रेरणा है।

आसक्ति की चीज का दान करें

कुछ लोग कहते हैं कि यहाँ की जमीन अच्छी है। इसलिए जमीन के लिए काफी मोह है। हम उन्हें कहना चाहते हैं कि हम जमीन का मोह घटाना नहीं चाहते, बढ़ाना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि हर मनुष्य के दिल में जमीन के लिए मोह-ममता पैदा हो, इसलिए जिसके पास जमीन नहीं है, उसे भी जमीन दिलाना अपना कर्तव्य समझते हैं।

घर में पड़े हुए कचरे को हम फेंक देते हैं तो क्या वह कचरा फेंकना दान कहलायेगा? नहीं, जिस चीज पर आसक्ति हो, वही चीज दी जाय, तब वह दान की मर्यादा में आती है। इसलिए आप इस काम की गहराई को समझिये और इसे उठा लीजिये। यह काम आपका है, ऐसा समझिये और मुझसे मदद लीजिये। मेरी ताकत आपके साथ होगी तो आप सिख जमात के असली उद्देश्यों को पूरा करने में कामयाब हो सकेंगे।

मुख्य सवाल या गौण सवाल?

मेरे मन में गुरु नानक के प्रति कितना आदर है, यह मैं बयान नहीं कर सकता। उन्होंने मानवीय विचारों को एक नयी प्रेरणा दी। पर आज हमें यह गम्भीरता से सोचना पड़ेगा कि क्या हम गुरु नानक की वाणी पर अमल कर रहे हैं? आज जितने झगड़े हैं, उतने ही झगड़े उस जमाने में भी थे। उन झगड़ों को खत्म करने के लिए गुरु नानक ने जीवन भर प्रयत्न किया। हम उनके भक्त लोग ही उनकी वाणी को भूल जायँ तो कैसे काम चलेगा?

मेरे सामने गुरुद्वारों की रक्षा का प्रश्न मुख्य नहीं है, बल्कि गुरु नानक और गुरु गोविन्दसिंह की वाणी की रक्षा का मुख्य सवाल है। गुरुद्वारे तो केवल मकान हैं। यदि हम वहाँ बैठकर झगड़ा करेंगे तो वह गुरुद्वारा कैसे रहेगा? वह तो 'झगड़े का द्वार' हो जायगा। गुरुद्वारा तो वह है, जहाँ हम गुरुओं की वाणी पर चलने के लिए शपथ लेते हैं।

इसलिए मैं अपने सिख भाइयों से बहुत प्रेमपूर्वक यह कहना चाहता हूँ कि आप लोग गुरुद्वारे का मोह छोड़कर गुरुओं की शिक्षा पर चलने की शपथ लें तो ये सारे झगड़े अपने आप मिट जायेंगे, वरना जिस धर्म की प्रतिष्ठा के लिए सिखों की जमात खड़ी हुई है, वह धर्म अपना तेज नहीं दिखा सकेगा। वह धर्म क्या है? साँझीवालता, एकता और प्रेम। यदि ये तीनों चीजें मिट गयी तो गुरुद्वारे रहे, तब भी क्या और न रहे, तब भी क्या? इसलिए मुख्य सवाल पर विचार करने के बाद यदि हम निश्छल और धर्मभावना से व्यावहारिक सवालों को हल करने की कोशिश करेंगे तो हमें कोई कठिनाई नहीं होगी। व्यावहारिक सवालों का हल अनावश्यक है, ऐसा मेरा मानना नहीं है। वह भी जरूरी है, पर वह तब तक उलझता जायगा, जब तक मुख्य चीज पर हमारा मन केन्द्रित नहीं होगा। [गतांक से समाप्त]

◆◆◆

प्रार्थना-प्रवचन राजपारडी (गुजरात) ६-१०-'५८

गाँव ही राष्ट्र की वास्तविक शक्ति है

इस प्रदेश में मैं पहले कभी नहीं आया, इसलिए मुझे बिलकुल नये-नये चेहरे दिखाई पड़ रहे हैं। इस पदयात्रा में जगह-जगह सुंदर दर्शन करने को मिलते हैं। निरंतर पदयात्रा चलती रहने से जनता-जनार्दन का हर रोज नया नया दर्शन होता है। इस यात्रा में कभी-कभी अपने शरीर का खयाल करना पड़ता है, जब कि उसकी आवश्यकता नहीं है। मनुष्य पूर्ण स्वस्थ और निर्विकार रहे तो उसका शरीर एक यंत्र की तरह काम दे सकता है। फिर उस पर विशेष ध्यान देने की जरूरत नहीं रहती। लेकिन मेरा शरीर वैसा नहीं है। मुझे इस पर ध्यान देना पड़ता है।

क्षमा करें

कल एकाएक मुझे याद पड़ा कि यहाँ नजदीक में ही 'कबीर-बड़' है। मैं यात्रा के स्थान ध्यान में रखकर अपना कार्यक्रम नहीं बनाता, क्योंकि यात्रा करने से जितना संतोष होता है, उतना ही संतोष मुझे आपके चेहरे देखने से हो जाता है। मैं आपमें ही नारायण के दर्शन पा लेता हूँ, लेकिन जब कि नजदीक ही 'कबीर-बड़' आ गया तो उसका दर्शन करने का मेरा मन हो गया। मैं वहाँ गया। कबीर का पवित्र स्मरण किया। थोड़ा-सा ध्यान किया और बाद में प्रगट चिंतन के तौर पर कुछ कह भी दिया। वहाँ से लौटते समय मुझे 'झगड़िया' होकर आना चाहिए था। मैंने सुना कि वहाँ हमारे दर्शनों के लिए बहुत से लोग उत्साहित होकर एकत्रित हुए थे। वे हमारी राह देख रहे थे। वहाँ से होकर आने में मुझे तीन मील अधिक चलना पड़ता। धूप में इस प्रकार प्रवास करने से मेरे शरीर को बहुत कष्ट होता है। यह शरीर उस कष्ट को बरदाश्त नहीं कर सकता। इसलिए हम वहाँ से होकर नहीं आये। हमारे ऐसा करने से वहाँ के लोगों को बहुत निराशा हुई। 'झगड़िया' में इतने लोग इंतजार कर रहे हैं, इस बात का अगर हमें पहले पता होता तो हम अवश्य ही वहाँ होकर आते। लेकिन पहले से पता न होने से तथा अधिक श्रम से बचने के लिए हमने उधर का रास्ता नहीं लिया। इससे वहाँ के लोगों को बहुत निराशा हुई। इस कारण हम सर्वप्रथम वहाँ के लोगों से क्षमा माँग लेते हैं। आशा है, वे हमें क्षमा करेंगे।

दुःख मिटाने का उपाय

हमने जब से चलना शुरू किया है, तब से अब तक सैकड़ों गाँवों में हमारे पड़ाव हुए हैं। सभी पड़ावों पर औसत दस-दस गाँवों के लोग आये होंगे तो भी देश के सभी गाँव-वालों को अपनी बात सुना सकूँगा, ऐसा संभव नहीं है। पाँच लाख देहातों में पहुँचना मेरे लिए कैसे संभव हो सकता है? अगर सभी जगह पहुँचना आवश्यक ही हो तो भगवान को मुझे पाँच सौ वर्ष की आयु देनी चाहिए। क्या भगवान इतना धीरज रखेगा? ऐसा होना संभव नहीं है।

सद्विचारों के श्रवणमात्र से पापों का निरसन होता है। सद्विचार सुनें, समझें और उन्हें मन में लायें तो समस्त संकट टल जाते हैं। इसलिए झगड़िया गाँववालों को मेरी वाणी न सुनने से जो दुःख हुआ, उसे मिटाने का एक ही उपाय है कि वे हमारे विचारों के अनुरूप आचार करना आरंभ कर दें।

ग्रामशक्ति का बहिर्गमन

मैं जो काम कर रहा हूँ, उसकी जानकारी लगभग पूरे भारत में है। फिर भी अभी तक कई ऐसे गाँव होंगे, जहाँ कि संभवतः हमारे विचार नहीं पहुँचे होंगे। गाँवों में विचार पहुँचना बहुत कठिन होता है। एक-एक समाचार पहुँचने में बहुत समय लग जाता है। इसका कई बार अनुभव भी होता है। सात साल पहले की बात है। मैं एक देहात में गया। वहाँ गांधीजी के संबंध में चर्चा हुई। तब वहाँ के लोगों ने मुझसे पूछा कि आज-कल गांधीजी कहाँ रहते हैं? गांधीजी का स्वर्गवास होने के तीन साल बाद भी उन लोगों को उस बात का पता नहीं था। जब मेरे द्वारा उन्हें उसका पता चला तो वे आश्चर्यचकित रह गये। इस पर से आप हमारे गाँवों की परिस्थिति का अंदाजा लगा सकते हैं।

गाँव में दो मुख्य शक्तियाँ होती हैं: कुशल आदमी और श्रम-शक्ति। वे दोनों शक्तियाँ आज गाँव से शहरों की ओर जा रही हैं। मजदूरों और भूमिहीनों को गाँव में काम नहीं मिलता। इसलिए वे बहुत बड़ी तादाद में शहरों की ओर जा रहे हैं। काम की तलाश में इस प्रकार हजारों आदमियों का शहर की ओर जाना शहरों पर हमला ही कहा जा सकता है। गाँव की शक्ति चली जाती है और शहर पर भी हमला होता है तो इससे किसी को भी आवश्यक लाभ नहीं हो पाता।

मानव की यह दयनीय दशा

बंबई में फुटपाथ पर हजारों लोग जिन्दगी बसर करते हैं। उनकी दयनीय दशा देखकर इन्सान का दिल द्रवित हो जाना चाहिए। लेकिन आज उनकी दयनीय दशा देखकर कौन द्रवित होता है? सबका दिल पत्थर हो गया है। दीन, दुःखी और गरीब की ओर किसी का ध्यान नहीं है। स्वराज्य के बाद भी गरीबी मिट नहीं रही है, दुःख घट नहीं रहे हैं। यह स्थिति अब कब तक बरदाश्त की जा सकेगी? मकान की नींव कमजोर है तो ऊपर की मंजिलें कितने दिनों तक टिकी रह सकेंगी? शहरों का आधार गाँव है। गाँवों की मूलभूत शक्तियाँ गाँवों में नहीं हैं और शहरों में दयनीय स्थिति में कोई खास परिवर्तन नहीं हो पाता तो हम कैसे सुखी हो सकेंगे?

प्रेम ने गाँव और लोभ ने शहर बनाया

एक अंग्रेज कवि ने कहा है God made the country and man made the town. परमेश्वर ने गाँव बनाये। याने प्रेम ने गाँव बनाये। मनुष्य ने शहर बनाये, याने लोभ ने शहर बनाये। शहर और गाँव में इतना फर्क है। बम्बई जैसे शहर में एक पड़ोसी दूसरे पड़ोसी को नहीं पहचानता। सभी अपना-अपना धंधा करने में मस्त रहते हैं। वहाँ पैसों का लोभ ही मुख्य आधार है। इसके विपरीत गाँवों का मुख्य आधार प्रेम है। गाँव में किसी के यहाँ पुत्रजन्म होता है तो सारे गाँव में उसके लिए आनन्द होता है। किसी के यहाँ किसी का देहान्त हो जाता है, तब भी गाँववाले उसके दुःख से दुःखी होते हैं। गाँवों में परस्पर सहायता देने की प्रक्रिया आज भी चालू है। लेकिन जब से गाँवों की मूल शक्तियाँ शहरों की ओर जा रही हैं, तब से आपसी सहयोग का तत्त्व कम हुआ है। हम चाहते हैं कि सहकार के अभाव में गाँव टूटे नहीं। इसीलिए आप आपस में प्रेम से रहें तो गाँव की सारी शक्तियाँ गाँवों में ही रह सकती हैं।

शहरों में विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, पुस्तकालय आदि अनेकों आकर्षण होते हैं, लेकिन गाँवों में वैसे आकर्षण नहीं हैं। इसलिए गाँववाले अगर प्रेम से वैज्ञानिकों, साहित्यकारों, कवियों, चित्रकारों को अपनी ओर आकर्षित कर सकें तो बहुत बड़ा काम

हो सकता है। इस युग में अगर हम प्रेम और गुणों को व्यवस्थित रूप नहीं देंगे तो हम अशक्त हो जायेंगे, निस्सहाय हो जायेंगे, निस्तेज हो जायेंगे।

सुख-दुःख और क्रान्ति

ग्रामदान की बात सुनकर लोगों को यह भय लगता है कि हम सब गरीब और दुःखी हो जायेंगे। लेकिन मैं किसी को गरीब और दुःखी नहीं बनाना चाहता। सुखी को दुःखी और दुःखी को सुखी बनाने से दुःख कहीं न कहीं अवशेष रह ही जाता है। उस प्रक्रिया में क्रान्ति नहीं हो सकती। क्रान्ति तो तब होती है, जब सभी का दुःख मिटे, सभी प्रेम से रहें। मैंने बचपन में एक कविता सुनी थी :

"मात प्रेम, तात प्रेम, पुत्र प्रेम, पुत्री प्रेम।
प्रेम छे संसार सार, प्रेम छे संन्यास आधार।
परम प्रेम परम ब्रह्म।"

प्रेम की जगह आज लोगों के मन में द्वेष घुस गया है। भाई-भाई के बीच में झगड़ा होता है। इसकी उसके साथ नहीं पटती और उसकी इसके साथ नहीं पटती। इसका कारण क्या है? कानून! जबसे हमारे घरों में कानून घुसा है, तब से आपस-आपस में झगड़ा होने लगा है। यह बाप की मिलकियत, यह बेटे की मिलकियत और यह बेटी की मिलकियत—इस तरह अलग-अलग मिलकियत होने से लोग एक-दूसरे से अलग पड़ गये हैं। सबके हित एक-दूसरे से भिन्न हैं। बाप का हित बेटे से टकराता है और बेटे का हित बाप से टकराता है। फिर दोनों का झगड़ा कोर्ट तक पहुँचता है। नतीजा जो आता है, वह कहाँ छिपा है?

झगड़े के कारण दूर करें

मैं झगड़े के मुख्य कारण को गाँव-गाँव से निकालना चाहता हूँ। जिस घर में 'कर्तव्य' के बजाय 'हक' का प्राधान्य होता है, वहाँ झगड़ा होता है। इसलिए मैं 'हक' की भाषा छोड़कर मनुष्य को अपने कर्तव्य समझने की बात कहता हूँ। हम सभी लोग अपना-अपना कर्तव्य समझ लें तो नागरिक जीवन में शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो सकता है। फिर किसी भी गाँव में कहीं कोई भूखा नहीं रहेगा, दुःखी नहीं रहेगा और बिना काम के भी नहीं रहेगा। सबमें स्नेह रहेगा। आप स्नेह का महत्त्व समझकर अपने कर्तव्य को पहचानें तो गाँवों में सुख-सम्पन्नता हो सकेगी। गाँव ही राष्ट्र की वास्तविक शक्ति है।

◆◆◆

स्वागत-प्रवचन

पठानकोट (पंजाब) २०-५-'५९

पठानकोट को सर्वोदय-नगरी बनाने के लिए निष्ठापूर्वक प्रयत्न करें

इधर पंजाब है, उधर पाकिस्तान है और सामने है कश्मीर। इन तीनों के संधिस्थान में पठानकोट है। यहाँ से तीनों तरफ प्रस्थान किया जा सकता है, इसलिए यह पठान-कोट ही नहीं, बल्कि प्रस्थानकोट है। ऐसे स्थानों में, जहाँ कि संगम होता है, हमारी बहुत श्रद्धा है। प्राचीन काल से लेकर आज तक संगम-स्थान बहुत ही पवित्र माना गया है। नदियों का जहाँ संगम होता है, उस स्थान का कितना माहात्म्य होता है! जहाँ सभ्यताओं का संगम होता है, उस स्थान का भी बहुत महत्त्व होता है। संगम-स्थान में सब तरह की अच्छाइयाँ इकट्ठी होती हैं। यह स्थान पंजाब, कश्मीर और पाकिस्तान के बीच में होने से यहाँ के लोगों को अच्छे से अच्छे संस्कार मिल सकते हैं।

अच्छाइयों को संगृहीत करें

हर जगह की अपनी अलग-अलग संस्कृति होती है। हर संस्कृति में कुछ अच्छाइयाँ रहती हैं और कुछ बुराइयाँ भी रहती हैं। जो बुराइयाँ, बदियाँ होती हैं, उन्हें संस्कृति नहीं कहा जाता, वे विकृति के नाम से पहचानी जाती हैं। संगम-स्थान में जहाँ संस्कृति आती है, वहाँ साथ-साथ विकृति भी आती है। इसलिए विकृति को छोड़ना और संस्कृति को ग्रहण करना अपना उद्देश्य होना चाहिए। यहाँ तीनों ओर की अच्छाइयों को ग्रहण करेंगे तो यह पठानकोट अवश्य ही एक शानदार संगम-स्थान बन जायेगा।

अभी मैं छह सप्ताह से पंजाब का दौरा कर रहा हूँ। आज यहाँ आ पहुँचा हूँ। पंजाब में वेद, उपनिषद्, गीता आदि प्राचीन काल से भारतीय संस्कृति के अमर ग्रंथ प्रकाश में आये। इस जमाने में गुरुओं की वाणी भी हमारे सामने आयी। इसलिए यह स्थान संस्कृति का प्रधान केन्द्र रहा है। संस्कृति के सुन्दर स्वरूप का पंजाब में दर्शन होना चाहिए और यहाँ पठान-कोट में तो संस्कृति का स्वरूप अभिव्यक्त होना ही चाहिए।

स्त्रियों की जमात

दूसरे प्रांतों में भी संतवाणी प्रकट हुई है, लेकिन उसका वहाँ उतना असर नहीं हुआ, जितना कि यहाँ गुरुवाणी का हुआ है। मैंने देखा है कि यहाँ पर सचमुच ही गुरुओं ने एक चमत्कार कर दिया है। दूसरे प्रांतों में भाइयों के सत्संग चलते हैं, किन्तु यहाँ पंजाब में बहनों के भी सत्संग चलते हैं। गुरुओं ने स्त्रियों को परमार्थ-मार्ग में इस प्रकार प्रवेश करा दिया है कि उनकी एक जमात बन गयी है। स्त्रियों में सामूहिक उपासना होना एक बहुत बड़ी बात है। पुरुषों में जैसी उपासना चलती है, वैसी उपासना स्त्रियों में भी चलनी चाहिए, परंतु कई कारणों से वैसा संभव नहीं हुआ। मैंने १० हजार मुसलमानों को एक साथ शांति से नमाज पढ़ते हुए देखा है, लेकिन उनमें एक भी स्त्री शामिल नहीं होती। वहाँ स्त्रियों का बहिष्कार ही होता है।

धर्मकार्य में स्त्रियों का स्थान

प्राचीन काल में यहाँ पर स्त्री-पुरुष इकट्ठे होकर भजन-कीर्तन और धर्मकार्य करते थे। रामचन्द्र को यज्ञ करना था। वे गुरु के पास पहुँचे। गुरु ने उन्हें कहा कि सीता की संगति के बिना तुम अकेले यज्ञ नहीं कर सकते। यह उन दिनों की बात है, जब सीता को जंगल में भेज दिया गया था। राम को यज्ञ करना ही था, लेकिन सीता के बिना यज्ञ हो नहीं सकता था। इसलिए एक बीच की राह निकाली गयी। रामचन्द्र ने सीता की स्वर्ण-मयी प्रतिमा पास में रखकर यज्ञ सम्पन्न किया। इसका मतलब यह है कि स्त्री-पुरुषों को और खासकर गृहस्थाश्रमियों को एक साथ धर्मकार्य करना चाहिए। वेद में एक मंत्र आता है, जिसका आशय है कि परमात्मा का नमन पुरुषों को पत्नियों के साथ घुटने टेककर करना चाहिए।

स्त्री-पुरुषों की समानता की पश्चायिका : संस्कृत

पुराने जमाने में स्त्री-पुरुषों के साथ रहने का जो रिवाज था,

वह बीच के काल में कई कारणों से नहीं रह सका। इसलिए मध्यकाल में स्त्री-पुरुषों के व्यवहार अलग-अलग हो गये।

संस्कृत में स्त्री-पुरुषों के लिए एक ही क्रिया का इस्तेमाल होता था। आज भी वही परंपरा चालू है। पुरुष बोलता है—'अहं गच्छामि' और स्त्री भी 'अहं गच्छामि' ही कहती है। दोनों में किसी तरह का कोई भेद नहीं किया जाता, लेकिन हिन्दी में भेद किया जाता है। पुरुष बोलेगा तो कहेगा 'कि मैं जाता हूँ' और स्त्री कहेगी कि 'मैं जाती हूँ'। इस प्रकार हर वाक्य में अपनी क्रिया को जाहिर करने के साथ-साथ हमें स्त्री-पुरुषवाली बात को भी जाहिर करना पड़ता है। इसका मतलब यह है कि पहले जमाने में स्त्री-पुरुष मिल-जुलकर काम करते थे। इसलिए एक ही प्रकार की जबान बोली जाती थी। लेकिन जब से दोनों अलग पड़े, तब से भाषा में फर्क पड़ गया। फिर उपासना आदि सारी चीजों में भी भेद पड़ गया। लेकिन पंजाब के गुरुओं को यह श्रेय हासिल है कि उन्होंने स्त्रियों को स्वतंत्र स्थान देकर उनके सत्संग चलाये। अब अगला कदम यह है कि स्त्री-पुरुष एक साथ बैठकर सत्संग करें। गांधीजी ने इसी बात का प्रयास किया।

पठानकोट पहल करे

पठानकोट को तीनों संस्कृतियों की अच्छाइयों का लाभ लेकर सर्वोदय-नगरी बनना चाहिए। सर्वोदय यानी सब का उदय, सब की अच्छाइयों का संग्रह। इन दिनों ऐसी समाज-रचना बन गयी है कि एक की जीत के साथ दूसरों की हार होती है। ईर्ष्या के अधिष्ठान पर खड़े होनेवाले समाज में एक-दूसरों के हित टकराते हैं। लेकिन सर्वोदय में ईर्ष्या के लिए कोई स्थान नहीं है। सबका सहयोग है, सबके हितों का सामंजस्य है, इसलिए सर्वोदयमूलक समाज-रचना करने की दिशा में पठानकोट को आगे आना चाहिए। पठानकोट बम्बई, कलकत्ते जैसा बड़ा शहर नहीं है और न छोटा देहात ही है। इसलिए ऐसे स्थान में सर्वोदय का काम आसानी से हो सकता है। पठानकोट इस दिशा में पहल करे तो उसका असर पाकिस्तान, कश्मीर और संपूर्ण भारत पर पड़ सकता है।

छोटे देश कैसे टिकेंगे ?

अभी आपने देखा कि तिब्बत में कैसी घटना घट गयी! इस समय छोटे देशों का टिकना बहुत कठिन हो रहा है। जिस समाज में हिंसा चलती है, वहाँ छोटी इकाई नहीं टिक सकती। छोटे देश अब अहिंसा के आधार पर ही टिक सकते हैं। हम हिंदुस्तान में अहिंसा की प्रतिष्ठापना कर सकते तो मेरे लिए तिब्बतवालों को अहिंसा की सलाह देना शोभादायक होता! खैर, मैं किसी को सलाह देना चाहता भी नहीं। मुझे वह अधिकार भी नहीं है। परन्तु इस समय मैं एक सही विचार—जिस पर मेरी श्रद्धा है—आपके सामने प्रकट चिंतन के तौर पर रख रहा हूँ। वह विचार यह है कि छोटे-छोटे देश अब अहिंसा के आधार पर ही टिक सकते हैं। अगर छोटे देश हिंसा का आश्रय लेंगे तो बड़ों की टक्कर में नहीं टिक सकेंगे। इसलिए अगर हम चाहते हैं कि हमारे छोटे-छोटे देश और हम टिके रहें तो वह अहिंसा से ही संभव है।

निर्भयता की ओर

हमें इस पठानकोट को सर्वोदय-नगर बनाने के लिए सबसे पहली बात यह करनी है कि हम निर्भय हो जायँ। शरीर में जो पशुत्व है, उसीके कारण भय पैदा होता है। आज दुनिया के सभी राष्ट्र भयभीत हैं। इसलिए अब जो भय छोड़ेगा, वही दुनिया का नेतृत्व कर सकेगा। यह भय छोड़ने का काम आसानी से कौन कर सकता है? मेरी राय में सबसे पहले बहनें कर सकती हैं और दूसरे में वे लोग कर सकते हैं, जो शस्त्रबल पर भरोसा नहीं करते। जिनका विश्वास शस्त्रों पर है, वे कभी भी भय नहीं छोड़ सकते।

रावण सीता को लंका में ले गया, लेकिन उसकी हिम्मत सीता के साथ बात करने की नहीं हुई। एक बार वह बहुत ही हिम्मत करके सीता के पास अशोकवन में गया। वहाँ उसने डरते-डरते सीता के सामने कुछ कहा। सीता उसकी बातें निडर होकर सुनती रही। बिलकुल बेपरवाह थी वह! 'नानक बिगसे बेपरवाह'। आखिर में सीता ने जवाब देते समय रावण के सामने एक तिनका रख दिया। जिसका मतलब यह था कि उसने रावण को तिनके के माफिक समझा और कह दिया कि तुम मुझे डरा-धमका नहीं सकते। तुम्हारी बातों का असर मुझ पर कभी नहीं हो सकता। तुम तो एक तिनके जैसे हो। राक्षसों की नगरी में राक्षसों से घिरी हुई होने के बावजूद सीता ने रावण को जो सुनाया, वह सुनाने की ताकत उसमें कहाँ से आयी? स्पष्ट है कि वह आत्म-शक्ति के बल पर पूरी तरह से निर्भय थी। अगर सीता अपने हाथ में चाकू या छूरी रखती तो वह निश्चय ही रावण को देखकर थर-थर काँपने लग जाती, क्योंकि रावण के पास उससे भी बड़े औजार मौजूद थे।

[चालू]

भूल-सुधार

[विनोबा-प्रवचन के ता० २८ मई के अंक ६३ में पृ० ४५२ पर कालम एक की १६ वीं पंक्ति में "अमेरिका का सैनिक खर्च ४५ करोड़ की बजाय ४५ सौ करोड़" तथा ३२ वीं पंक्ति में व्यावहारिक के स्थान पर अव्यावहारिक पढ़ने की कृपा करें।

....प्रवचन अं० ६५ में पृ० ४६८ पर प्रकाशित "और न १४ हजार ग्रामदान" नहीं, वरन "और न लगभग ४ हजार ग्रामदान" है। पाठक कृपया यह भी सुधार लें।—सं०]

अनुक्रम

१. वह धर्म निकम्मा है, जो कोई क्रान्ति....
होशियारपुर १२ मई '५९ पृष्ठ ४६९
२. गाँव ही राष्ट्र की वास्तविक शक्ति है
राजपारड़ी ६ अक्टोबर '५८ " ४७०
३. पठानकोट को सर्वोदय-नगरी बनाने...
पठानकोट २० मई '५९ " ४७१

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता : गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१
तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी।